हृदय—सच्ची अवस्था

अमी बन्सल द्वारा एक वार्ता

भगवान नित्यानन्द की सौर पुण्यतिथि के सम्मान में हम उनकी मूल सिखावनी पर चिन्तन-मनन करेंगे—वह सिखावनी जिसमें सभी शास्त्रों का सार निहित है। भगवान नित्यानन्द को प्रेम से 'बड़े बाबा' कहकर भी बुलाया जाता है। बड़े बाबा जी का उपदेश था :

सभी पवित्र तीर्थों का केन्द्र हृदय है। वहाँ जाओ और वहीं रमण करो।

आज मैं बड़े बाबा जी की इस मूल सिखावनी के एक वाक्यांश पर बात करूँगी : "केन्द्र हृदय है।"

"केन्द्र हृदय है।" एक सिद्ध के शब्दों का जब अध्ययन किया जाता है और उन्हें अपने बोध में धारण किया जाता है तब उनका हरेक शब्द आपको, आपकी अपनी सच्ची आत्मा के ज्ञान तक ले जा सकता है। आज, इस एक वाक्यांश पर केन्द्रण और चिन्तन-मनन कर, हम बड़े बाबा जी की इस सिखावनी के अर्थ व उसकी गहराई को अनावृत करेंगे।

बड़े बाबा जी का उपदेश है : "केन्द्र हृदय है।" 'हृदयम्' संस्कृत व हिन्दी भाषा का शब्द है। हृदयम्, एक ऐसी अवधारणा है जो हमें वेदों से विरासत में मिली है। सहस्रों वर्षों से, भारत के ऋषि-मुनियों ने मूलभूत सत्य का, हरेक चीज़ के केन्द्र का, मध्य का वर्णन करने के लिए, 'हृदयम्' शब्द का प्रयोग किया है।

छान्दोग्य उपनिषद् के अनुसार संस्कृत शब्द 'हृदयम्' की उत्पत्ति दो शब्दों से मिलकर हुई है : 'हृदि' और 'अयम्'। इस संस्कृत शब्द की व्युत्पत्ति से जुड़े अर्थ के विषय में बताते हुए, इस उपनिषद् में कहा गया है :

> स वा एष आत्मा हृदि तस्यैतदेव निरुक्तं हृद्ययमिति।
>
> 'हृदयम्' शब्द का व्युत्पत्ति सम्बन्धी वर्णन यह है : 'हृदि' का अर्थ है, 'हृदय के क्षेत्र में' और 'अयम्' का अर्थ है, 'यह,' 'आत्मा।' इसे 'हृदयम्' इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह आत्मा का निवास-स्थान है।[१]

भौतिक हृदय-क्षेत्र में निवास है परम आत्मा का जिसे 'हृदय' भी कहा जाता है। आत्मा का उल्लेख करने के लिए ऋषि-मुनि प्रायः 'हृदयम्' शब्द का प्रयोग करते हैं क्योंकि यह हमारी वैयक्तिक सत्ता का *और*

समस्त ब्रह्माण्ड का ऊर्जास्रोत है। आदि शंकराचार्य वेदों में से एक महावाक्य, 'अयं आत्मा ब्रह्म'—'यह आत्मा ब्रह्म है,' पर अपनी टीका में हमें इस विषय में सिखाते हैं। महर्षि समझाते हैं कि 'अयं आत्मा'—'यह आत्मा'—इस वाक्यांश पर मनन करते समय हमें अपने हाथ से अपने हृदयस्थान की ओर संकेत करना चाहिए जो कि अन्तर-आत्मा का निवास-स्थान है।

'हृदयम्' परम आत्मा है, वही एकमेव और सर्वव्यापिनी चिति जो हर चीज़ में प्रकाशित है।

'हृदयम्' वह ज्योतिर्मय प्राणशक्ति है जो इस विशाल, व्यापक ब्रह्माण्ड के सभी जीवों को चैतन्य प्रदान करती है।

'हृदयम्' का अनुभव अनन्त, अहैतुकी प्रेम के रूप में किया जा सकता है।

बड़े बाबा जी की सिखावनी है :

> सभी पवित्र तीर्थों का केन्द्र हृदय है। वहाँ जाओ और वहीं रमण करो।

"केन्द्र हृदय है।" केन्द्र—कितनी उत्कृष्ट छवि है! 'केन्द्र,' संस्कृत व हिन्दी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है, किसी चीज़ का मध्यबिन्दु, उसके बीचोबीच का स्थान।

भारत के शास्त्रों में और साथ ही हमारे इस संसार में 'केन्द्र' की इस धारणा पर आधारित प्रचुर उपमाएँ, रूपक और प्रतीक मिलते हैं।

आँख की पुतली पर ग़ौर करें। यह हमारी दृष्टि का केन्द्रबिन्दु है। या एक अणु के नाभिक या न्यूक्लियस पर ग़ौर करें, कितना सूक्ष्म, फिर भी एक पूरे सूक्ष्म-ब्रह्माण्ड की धुरी! या एक फल के बीज को ले लीजिए, जिसमें एक सम्पूर्ण वृक्ष बनने की सामर्थ्य होती है। और एक पहिए की छवि के विषय में क्या कहेंगे जिसके मध्यबिन्दु से बाहर की ओर अरे निकल रहे होते हैं?

आप में से जो लोग भारत के ध्वज से परिचित हैं, उन्होंने ध्वज के बीचोबीच स्थित एक पहिया देखा होगा। यह धर्म-चक्र है। संस्कृत भाषा में 'धर्म' उसका सूचक है जो धारण करता है, जो हर चीज़ को सँभालता है, उसे बनाए रखता है। धर्म-चक्र हमारे जीवन की गतिशीलता का, हमारे कर्मों का प्रतीक है, और उस उन्नति का प्रतीक है जो हम नेक व सदाचारपूर्ण रहन-सहन के तरीक़ों पर सतत दृढ़ता से बने रहकर करते हैं। और नेक व सदाचारपूर्ण रहन-सहन का तरीक़ा क्या है? सीधे शब्दों में कहें तो, यह ऐसा जीवन है जो उदाहरण हो दैवी सद्गुणों का—हृदय के गुणों का।

केन्द्र वह है जो सम्पूर्ण के या समग्र के सत्त्व को, सार को धारण करता है, जैसे कि सूरजमुखी के फूल के बीच में स्थित उसका बीजकोष जो उसके पोषक बीजों को धारण करता है। भारतीय शास्त्रों के अनुसार, फूल, केन्द्र का एक प्रमुख प्रतीक है। हमारी सत्ता में स्थित शक्ति-केन्द्रों या चक्रों को परम्परागत रूप से मनोरम फूलों के रूप में दर्शाया जाता है। इनमें से हरेक फूल के केन्द्र में उसकी विशेष शक्ति निहित होती है। प्रायः इन चक्रों को कमल के रूप में दर्शाया जाता है।

छान्दोग्य उपनिषद् के एक उद्बोधक श्लोक में, हमारी सत्ता में विद्यमान, स्फटिक के समान स्वच्छ एक श्वेत कमल के केन्द्र का वर्णन है। यह चिदाकाश या चिति के अन्तराकाश में स्थित है।

आइए छान्दोग्य उपनिषद् के ज्ञान का श्रवण करते हैं :

> अथ यदिदमस्मिन्ब्रह्मपुरे दहरं पुण्डरीकं वेश्म
> दहरोऽस्मिन्नन्तराकाशस्तस्मिन्यदन्तस्तदन्वेष्टव्यं
> तद्वाव विजिज्ञासितव्यमिति॥
> यावान्वा अयमाकाशस्तावानेषोऽन्तर्हृदय आकाश।
> उभे अस्मिन्द्यावापृथिवी अन्तरेव समाहिते॥
> उभावग्निश्च वायुश्च सूर्याचन्द्रमसावुभौ विद्युन्नक्षत्राणि।
> यच्चास्येहास्ति यच्च नास्ति सर्वं तदस्मिन्समाहितमिति॥
>
> ब्रह्मपुरी में अर्थात् परम आत्मा में एक देदीप्यमान श्वेत कमल है जो हृदयकमल है। उसके अन्दर एक सूक्ष्म आकाश है। हृदयकमल के मध्य स्थित इस सूक्ष्म आकाश में व्यापक, अनन्त विस्तार है। पृथ्वी और आकाश, अग्नि और वायु, सूर्य और चन्द्र, विद्युत और नक्षत्र, इस प्रकट जगत के ज्ञात और अज्ञात सभी पदार्थ इसी स्थान में समाहित हैं। तुम्हें हृदय के मध्य स्थित इस केन्द्र की खोज व अनुभूति करने का प्रयास करना चाहिए।[२]

भारत के अनेक मन्दिरों और शास्त्रों में एक छवि बहुत बार मिलती है, वह है 'मण्डल' की छवि। 'मण्डल' एक गोलाकार आकृति है जो प्रायः एक पुष्प जैसी दिखती है। यह प्रतीकात्मक वृत्त परमतत्त्व को समस्त सृष्टि के केन्द्र व उसकी धुरी के रूप में दर्शाता है।

प्राचीन काल के ये 'मण्डल' नक़्शों की तरह हैं जो यह दर्शाते हैं कि इस ब्रह्माण्ड का उद्भव एक नन्हें-से बिन्दु से यानी केन्द्रबिन्दु से हुआ है जो जीवन का सत्त्व है। इसी बिन्दु से, जिसे बाबा मुक्तानन्द प्रायः नीलबिन्दु कहकर सम्बोधित किया करते थे, सकल जगत का और इसके अनगिनत रूपाकारों व ध्वनियों का आविर्भाव होता है।

इसी केन्द्रबिन्दु में, वह आद्य प्राणशक्ति निहित है जो सम्पूर्ण विश्वब्रह्माण्ड की जीवन-शक्ति है। छान्दोग्य उपनिषद् में बताया गया है कि :

> यथा वा अरा नाभौ समर्पिता एवमस्मिन्प्राणे सर्वं समर्पितम्।
>
> यह सब, यह समस्त विश्वब्रह्माण्ड, प्राणशक्ति से वैसे ही जुड़ा है जैसे नाभि या केन्द्र से अरे जुड़े होते हैं।[३]

यह प्राणशक्ति सम्पूर्ण विश्वब्रह्माण्ड को जोड़कर रखती है क्योंकि यह समस्त सृष्टि में जीवन का, चैतन्य का संचार करती है। सिद्धयोग ध्यान में, हम ध्यान के अभ्यास के आरम्भ में श्वास-प्रश्वास पर केन्द्रण करके प्राणशक्ति की अनुभूति करते हैं। श्वास, यानी हमारी अपनी प्राणशक्ति, अन्तरस्थ हृदय तक पहुँचने का राजमार्ग है।

अपनी इस सिखावनी में, बड़े बाबा जी हमें निर्देश देते हैं, "वहाँ जाओ और वहीं रमण करो"—उस केन्द्र में जाओ और उसकी अनुभूति करो। मैं आपको भारत के शास्त्रों में बताए गए एक यौगिक अभ्यास के बारे में बताती हूँ जिससे हम इस पावन केन्द्र तक पहुँचकर हृदय की अनुभूति कर सकते हैं।

शास्त्रों में बताया गया है कि आप 'मध्य के स्थान' पर अपना ध्यान केन्द्रित कर सकते हैं—उदाहरण के लिए श्वास और प्रश्वास के मध्य के अन्तराल पर, या दो विचारों के बीच के अवकाश पर या किसी संगीत-रचना के बीच स्थित ठहराव पर अथवा बोध की दो अवस्थाओं के बीच के क्षण में [जैसे कि जब आप जाग्रत अवस्था को छोड़कर स्वप्नावस्था में प्रवेश करने ही वाले होते हैं]।

शैवदर्शन के शास्त्र, विज्ञानभैरव में इस 'मध्य के स्थान' के विषय में यह बताया गया है :

> उभयोर्भावयोर्ज्ञाने ध्यात्वा मध्यं समाश्रयेत्।
> युगपच्च द्वयं त्यक्त्वा मध्ये तत्त्वं प्रकाशते॥
>
> एक के बाद एक घटित होने वाले दो कार्यों या अनुभूतियों का अनुभव करते समय, साधक को दोनों को छोड़कर उनके मध्यस्थान या अन्तराल पर अपना ध्यान एकाग्र करना चाहिए। केन्द्रस्थान यानी 'मध्य' पर ध्यान केन्द्रित करते-करते मूलभूत तत्त्व, आत्मा मध्य में जगमगा उठेगी।[४]

कई शास्त्रों में हृदय-केन्द्र को 'मध्य' कहकर वर्णित किया गया है। मध्य का अर्थ है 'बीच का स्थान' और यह हमारी सत्ता के बीच स्थित अन्तर-स्थान का द्योतक है। जैसा कि इस श्लोक में बताया गया है, विभिन्न चीज़ों के मध्यबिन्दु पर केन्द्रण करके मध्य को खोजना व इसे अनुभव करना चाहिए।

श्वास और प्रश्वास के बीच के अन्तराल पर केन्द्रण करना, हमारी अपनी सत्ता में स्थित 'मध्य' में, केन्द्र में प्रवेश करने का श्रेष्ठ तरीक़ा है। जब आप अन्दर आते श्वास और बाहर जाते प्रश्वास पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हैं तब आप पाते हैं कि प्राणशक्ति के इस प्रवाह-चक्र में, एक विराम है : श्वास और प्रश्वास के बीच का अन्तराल या स्थान। यह अन्तराल ही मध्यबिन्दु है। बारम्बार इस अन्तराल में प्रवेश करने के अभ्यास से, आपका मन अधिक शान्त, अधिक स्थिर हो जाता है और विरोधाभासी भावनाओं जैसे कि सुख-दुःख, लाभ-हानि के उतार-चढ़ाव से कम प्रभावित होता है।

मैं आपको एक अनुभव सुनाती हूँ। वर्ष २००४ में जब मैं श्री मुक्तानन्द आश्रम गई थी तब मैंने विश्वभर के सिद्धयोग ध्यान-शिक्षकों और केन्द्र-संचालकों के एक सम्मेलन में भाग लिया था। सम्मेलन के दौरान श्रीगुरुमाई ने कई प्रवचनों द्वारा प्रतिभागियों को ज्ञान प्रदान किया।

एक दिन, प्रवचन के बाद गुरुमाई जी ने प्रतिभागियों को मन्दिर में बड़े बाबा जी के दर्शन करने के लिए आमन्त्रित किया। गुरुमाई जी ने हमें यह निर्देश दिया कि हम बड़े बाबा जी से प्रार्थना करें व उनके आशीर्वादों का आवाहन करें ताकि हम श्रीगुरु को और सिद्धयोग पथ के सार को और भी अधिक गहरे स्तर पर समझ सकें।

गुरुमाई जी के संकल्प को एक प्रार्थना की तरह अपने मन में धारण किए हुए और 'उसे' जानने की सच्ची इच्छा के साथ जिसे वे चाहती थीं कि मैं जानूँ, मैंने मन्दिर में प्रवेश किया। मैंने बड़े बाबा जी के तेजोमय स्वरूप के समक्ष सम्मानपूर्वक अपना सिर झुकाकर उन्हें प्रणाम किया।

जब मैंने अपना सिर उठाकर बड़े बाबा जी की ओर देखा तो पाया कि मैं अत्यन्त शान्त व स्थिर हूँ। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे मेरे श्वास-प्रश्वास का उदय एक शान्तिमय स्थान से हो रहा है और उसका विलय भी उसी स्थान में हो रहा है। मेरी सत्ता एक शान्त झील के समान एकदम अचल प्रतीत हो रही थी जो केवल वर्तमान क्षण को प्रतिबिम्बित कर रही थी। न भूत था, न भविष्य, केवल वर्तमान था। समय था ही नहीं इसलिए ऐसा कुछ नहीं था जिससे मैं डरूँ या जिसकी मैं कामना करूँ। सीमित पहचान का कोई भाव नहीं था, न ही नामों का कोई बोध जो एक चीज़ से दूसरी चीज़ में, एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में अन्तर कर सके। ऐसा लग रहा था कि भगवान नित्यानन्द के मन्दिर में उपस्थित अन्य लोग और वस्तुएँ मेरी अपनी ही शक्ति का विस्तार हैं।

मैं वहाँ बैठी बड़े बाबा जी की ओर देख रही थी, तभी ये शब्द मेरे बोध में स्पन्दित होने लगे : "आत्मा के मन्दिर में मैं आत्मा हूँ। आत्मा के मन्दिर में मैं आत्मा हूँ।" यद्यपि हमारे बाहरी स्वरूप अलग-अलग दिख रहे थे, फिर भी मुझे मालूम था कि बड़े बाबा और मैं मूल रूप से एक ही हैं। हर

चीज़ और हर कोई इसी एक ब्रह्माण्डीय शक्ति का भाग था। इस विशुद्ध 'अहंबोध' में केवल आत्मा का ही अस्तित्व था।

कुछ पल मैं इसी अनुभव में बनी रही। फिर धीरे-धीरे पुनः, पहचानों, नामों और समय का बोध होने लगा। कृतज्ञता से भरकर मैं मुस्कराई और अपनी श्रीगुरु की कृपा व उनके संकल्प से मुझे अभी-अभी जो अनुभूति हुई थी, उसे अपने अन्दर सँजोने लगी। मन्दिर से बाहर जाने से पहले मैंने एक बार फिर बड़े बाबा जी को प्रणाम किया।

"क्या था यह अनुभव?" मैंने अपने आप से पूछा। मन्दिर से बाहर आते हुए, मैं अब भी बड़े बाबा जी की ओर ही मुख किए हुए थी। मैंने अपना सिर उठाया और मेरी नज़र दरवाज़े की चौखट के ऊपर लिखे शब्दों पर पड़ी। वे शब्द थे :

> सभी पवित्र तीर्थों का केन्द्र हृदय है। वहाँ जाओ और वहीं रमण करो।

"अच्छा..." मैंने सोचा। "यह हृदय ही है! मुझे हृदय का बोध हुआ है! कितना महान आशीर्वाद है यह!"

श्रीगुरु की कृपा अनवरत है। श्रीगुरु का प्रेम असीम है। श्रीगुरु के आशीर्वाद सतत विद्यमान हैं।

सिद्धयोग पथ पर :

> जब आप श्वास-प्रश्वास पर एकाग्र रहते हुए ध्यान करते हैं तब आप दिव्य केन्द्र को खोज लेते हैं।
>
> जब आप सिद्धयोग की सिखावनियों का अध्ययन करते हैं तब आप इसे समझ जाते हैं।
>
> जब आप भगवान का नाम गाते हैं और सत्संग में भाग लेते हैं तब आप इस हृदयाकाश का उत्सव मनाते हैं।
>
> जब आप सेवा करते हैं और दक्षिणा अर्पित करते हैं तब आप इस पावन केन्द्र का सम्मान करते हैं।
>
> जब हृदय आपके जीवन का केन्द्रबिन्दु बन जाता है तब आप इस 'केन्द्र' में अवस्थित हो जाते हैं।

स्मरण रखें :

हृदय आपके अत्यन्त समीप है,

इतना समीप कि आप कल्पना भी नहीं कर सकते।

यह इतना निकट है जितनी आपकी खिलखिलाहट में निहित खुशी,

जितना आपकी दृष्टि में निहित प्रकाश,

जितना आपके शब्दों में निहित अर्थ,

और आपके श्वास में निहित प्राणशक्ति।

इसे निहारें, इसे अंगीकार करें, इससे प्रेम करें—हृदय के केन्द्र को।

© २०२१ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।

---

[१] छान्दोग्य उपनिषद्, ८.३.३; अंग्रेज़ी भाषान्तर © एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन, २०२०।

[२] छान्दोग्य उपनिषद्, ८.१.१ एवं ८.१.३; अंग्रेज़ी भाषान्तर © एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन, २०२०।

[३] छान्दोग्य उपनिषद्, ७.१५.१; अंग्रेज़ी भाषान्तर © एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन, २०२०।

[४] विज्ञानभैरव, ६१; अंग्रेज़ी भाषान्तर © एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन, २०२०।